कर्मकारक

दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च

दूर, अन्तिक (निकट) तथा इनके समानार्थक शब्दों में द्वितीया, तृतीया, पंचमी तथा सप्तमी विभक्तियाँ होती हैं। जैसे-

गृहस्य, गृहात् वा अन्तिकं/ अन्तिकेन/ अन्तिकात्/ अन्तिके उद्यानं वर्तते।

तृतीया विभक्ति

अनुर्लक्षणे

तृतीयार्थे

हीने

विशेष हेतु को लक्षित करने के लिए जब 'अनु' का प्रयोग होता है तब यह प्रवचनीय बन जाता है, यथा-'जपमनु प्रावर्षत्' अर्थात् जप समाप्त होते ही वृष्टि हो गयी । यहाँ जप ही वृष्टि का कारण हुआ।

अनु' से तृतीया होने पर उसकी प्रवचनीय संज्ञा होती है, यथा-'नदीम् अन्वसिता सेना' (नद्या सह सम्बद्धा)

'अनु' से हीन अर्थ लक्षित होने पर वह प्रवचनीय कहलाता है, यथा-'अनु हरिं सुराः' देवता हरि के बाद ही आते हैं अर्थात् हरि से कुछ नीचे ही हैं।

उपोऽधिके च

'अधिक' तथा 'हीन' अर्थ का वाचक होने पर 'उप' भी प्रवचनीय कहलाता है, किन्तु हीन का अर्थ लक्षित होने पर द्वितीया होती है, अन्यथा सप्तमी होती है, यथा - उप हरिं सुराः' अर्थात् देवता हरि से कुछ नीचे पड़ते हैं, अधिक अर्थ मैं "उपपरार्धे हरेर्गुणाः' अर्थात् परार्ध से अधिक (ऊपर) ही हरि के गुण होंगे।' 'उपपरार्धम्' ऐसा प्रयोग नहीं होगा।

लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः

"जब किसी ओर संकेत करना हो, या जब 'ये इस प्रकार के हैं' ऐसा बतलाना हो, या 'यह उनके हिस्से में पड़ता है' या पुनरुक्ति बतलानी हो तब प्रति, परि और अनु प्रवचनीय कहलाते हैं और इनके योग में द्वितीया विभक्ति होती है, यथा-

प्रासादं प्रति विद्योतते विद्युत् (बिजली महल पर चमक रही है)

भक्तो हरिं प्रति पर्यनु वा (हरि के ये भक्त हैं)

लक्ष्मी: हरिं प्रति (लक्ष्मी विष्णु के हिस्से पड़ी)

लतां लतां प्रति सिंचति (प्रत्येक लता को सींचता है)।

अभिरभागे

भाग को छोड़कर अन्य समस्त ऊपर के अर्थों में 'अभि' कर्मवचनीय कहलाता है,

यथा-हरिम् अभिवर्तते ।

भक्तो हरिमभि।

देवं देवमभिषिञ्चति ।

उपपद विभक्तियाँ

कारकों से सदैव विभक्तियों का ही निर्देश नहीं होता, अपितु ये विभक्तियाँ वाक्य में अनु, अन्तरा, विना, प्रति, सह आदि निपातों तथा नमः, स्वाहा, अलम् आदि अव्ययों के योग से भी व्यवहृत होती हैं और 'उपपद विभक्तियाँ' कहलाती हैं, जैसे-

अन्तरान्तरेण युक्ते

अन्तरा (बीच में), अन्तरेण (विना, विषय में, छोड़कर) शब्दों की जिससे सन्निकटता प्रतीतत: होती है उसमें द्वितीया होती है, यथा-

(अन्तरा) गङ्गां यमुनां चान्तरा प्रयागराजः अस्ति (गंगा और यमुना के बीच में प्रयाग राज है), अन्तरा त्वां मां हरिः।

(अन्तरेण) ज्ञानमन्तरेण (ज्ञानं विना वा) नैव सुखम् (ज्ञान के बिना सख नहीं है)

राममन्तरेण न किंचिद् जानामि (राम के विषय में कुछ नहीं जानता हूँ।)